



Swami Vivekananda Advanced Journal for Research and Studies

Online Copy of Document Available on: www.svajrs.com

ISSN:2584-105X

Pg. 441–450



मुस्लिम विवाह-विच्छेद कानून में महिला अधिकारों का बदलता स्वरूप : एक समालोचनात्मक अध्ययन

डॉ. अजय कुमार

शोध-पर्यवेक्षक, सहायक आचार्य, विधि विभाग
सी.एम.पी. डिग्री कॉलेज, प्रयागराज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

निशा यादव

शोधार्थी, विधि विभाग
सी.एम.पी. डिग्री कॉलेज, प्रयागराज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

Accepted: 07/06/2026

Published: 17/06/2026

DOI: <https://doi.org/10.5281/zenodo.22872887>

सारांश

भारत में मुस्लिम विवाह-विच्छेद संबंधी विधि का विकास किसी एक विधान या किसी एक न्यायिक निर्णय की कहानी नहीं है। यह धार्मिक-विधिक सिद्धांतों, औपनिवेशिक कालीन अधिनियमों, स्वतंत्रता-उत्तर कल्याणकारी विधियों, संवैधानिक न्यायशास्त्र और महिला आंदोलनों के परस्पर प्रभाव से निर्मित बहुस्तरीय प्रक्रिया है। प्रस्तुत समीक्षा-लेख का उद्देश्य यह विश्लेषित करना है कि मुस्लिम महिला की विधिक स्थिति किस प्रकार एकतरफा तलाक से प्रभावित निष्क्रिय पक्षकार की छवि से आगे बढ़कर विवाह-विच्छेद आरंभ करने वाली स्वायत्त अधिकारधारी, आर्थिक उपचारों की दावेदार और न्यायिक रूप से सत्यापित वैवाहिक स्थिति की मांग करने वाली नागरिक के रूप में विकसित हुई है। अध्ययन का मुख्य आधार वर्ष २०१७ से जुलाई २०२६ तक के न्यायिक निर्णय और पिछले दस वर्षों में प्रकाशित प्रामाणिक शोध-साहित्य है। पुराने अधिनियमों का उपयोग केवल इसलिए किया गया है क्योंकि वे आज भी प्रवर्तमान प्राथमिक विधिक स्रोत हैं। लेख शायरा बानो निर्णय, वर्ष २०१९ के अधिनियम, खुला संबंधी नवीन उच्च न्यायालयीय व्याख्याओं, मोहम्मद अब्दुल समद निर्णय तथा भरण-पोषण, मेहर, निवास और अभिरक्षा के समानांतर उपचारों की समीक्षा करता है। इसका निष्कर्ष है कि महिला अधिकारों का विस्तार वास्तविक है, किंतु यह अभी भी खंडित मंचों, अस्पष्ट प्रक्रियाओं, प्रमाण संबंधी कठिनाइयों और कमजोर प्रवर्तन से सीमित है। केवल तलाक-ए-बिद्दत को शून्य और दंडनीय बना देना पर्याप्त नहीं; महिला-प्रेरित विवाह-विच्छेद की स्पष्ट प्रक्रिया, पंजीकृत वैवाहिक स्थिति, समयबद्ध आर्थिक राहत और संस्थागत समन्वय आवश्यक हैं।

मुख्य शब्द : मुस्लिम विवाह-विच्छेद; महिला अधिकार; तलाक-ए-बिद्दत; खुला; भरण-पोषण; मेहर; संवैधानिक समानता; प्रक्रियात्मक न्याय।

१. प्रस्तावना

विवाह-विच्छेद केवल वैवाहिक संबंध की समाप्ति नहीं है। वह व्यक्ति की विधिक स्थिति, निवास, आय, प्रतिष्ठा, बच्चों के साथ संबंध, पुनर्विवाह की क्षमता और न्याय तक पहुँच को एक साथ प्रभावित करता है। मुस्लिम विधि में निकाह की संविदात्मक विशेषताएँ महत्वपूर्ण हैं, किंतु निकाह को केवल निजी संविदा मानना पर्याप्त नहीं होगा; यह सामाजिक उत्तरदायित्व, धार्मिक मान्यता और राज्य द्वारा मान्य विधिक परिणामों से जुड़ी संस्था भी है। इसलिए विवाह-विच्छेद की वैधता का प्रश्न मात्र उच्चारण तक सीमित नहीं रह सकता। यह भी देखा जाना चाहिए कि पहल किसने की, सूचना किसे और कैसे दी गई, मेल-मिलाप का अवसर था या नहीं, वैवाहिक स्थिति का प्रमाण क्या है, तथा अलगाव के बाद महिला और बच्चों को कौन-से प्रभावी उपचार उपलब्ध हुए।

भारतीय सार्वजनिक विमर्श ने लंबे समय तक “मुस्लिम तलाक” को लगभग “तीन तलाक” का पर्याय बना दिया। इस संकुचन से दो प्रकार की हानि हुई। प्रथम, पति द्वारा आरंभ किए जाने वाले तलाक के भिन्न रूपों अहसन, हसन और बिद्दत के बीच का अंतर धुँधला हुआ। द्वितीय, पत्नी के लिए उपलब्ध तलाक-ए-तफवीज, खुला, मुबारात और न्यायिक फस्ख जैसे मार्ग पृष्ठभूमि में चले गए। जबकि १९३७ का अधिनियम स्वयं विवाह-विच्छेद के अनेक रूपों को मान्यता देता है।¹ महिला अधिकारों के बदलते स्वरूप का आकलन तभी संभव है जब अध्ययन तीन तलाक की मनाही से आगे बढ़कर महिला की निकास-स्वायत्तता, आर्थिक पुनर्स्थापन और वैवाहिक स्थिति की निश्चितता को एक साथ देखे।

इस समीक्षा का केंद्रीय तर्क यह है कि हाल के विधायी और न्यायिक विकासों ने तीन महत्वपूर्ण परिवर्तन किए हैं। पहला परिवर्तन एकतरफा और तात्कालिक वैवाहिक परित्याग के विरुद्ध सुरक्षा का है। दूसरा परिवर्तन पत्नी द्वारा आरंभ किए गए विवाह-विच्छेद, विशेषतः खुला, को स्वायत्त अधिकार के रूप में पुनर्परिभाषित करने का है। तीसरा परिवर्तन भरण-पोषण को धार्मिक सीमा में बंद दायित्व के बजाय गरिमा और सामाजिक न्याय से जुड़े बहु-स्रोत अधिकार के रूप में पढ़ने का है। फिर भी इन उपलब्धियों को पूर्ण परिवर्तन मान लेना जल्दबाजी होगी, क्योंकि अधिकार की घोषणा और उसके वास्तविक प्रवर्तन के बीच अभी पर्याप्त दूरी मौजूद है।

२. अध्ययन की पद्धति, सीमा और समीक्षा-दृष्टि

यह लेख सैद्धांतिक विधिक समीक्षा पर आधारित है। इसमें संविधान, प्रवर्तमान केंद्रीय अधिनियम, उच्चतम न्यायालय और चयनित उच्च न्यायालयों के निर्णय, तथा सहकर्मी-समीक्षित नवीन शोध-साहित्य का विश्लेषण किया

गया है। द्वितीयक साहित्य और प्रमुख न्यायिक निर्णयों की काल-सीमा मुख्यतः वर्ष २०१७ से जुलाई २०२६ तक रखी गई है। १९३७, १९३९, १९८६, १९८४ और २००५ के अधिनियम इस समय-सीमा के बाहर अवश्य हैं, पर वे वर्तमान विधिक व्यवस्था के प्रभावी प्राथमिक स्रोत हैं; अतः उनका उपयोग ऐतिहासिक उद्धरण के रूप में नहीं, लागू विधि के रूप में किया गया है।

समीक्षा का विश्लेषण चार परस्पर जुड़े मानकों पर किया गया है अधिकार, प्रक्रिया, उपचार और परिणाम। अधिकार यह पूछता है कि विवाह-विच्छेद कौन आरंभ कर सकता है और उसकी स्वायत्तता कितनी है। प्रक्रिया सूचना, सुलह, प्रमाण, पंजीकरण और न्यायिक पर्यवेक्षण को देखती है। उपचार में भरण-पोषण, उचित एवं न्यायसंगत प्रावधान, मेहर, निवास, संरक्षण और अभिरक्षा सम्मिलित हैं। परिणाम का प्रश्न यह है कि विधि महिला को व्यवहार में स्पष्ट वैवाहिक स्थिति, आर्थिक सुरक्षा, गरिमा और समयबद्ध न्याय प्रदान करती है या नहीं। यही दृष्टि इस लेख को केवल विधायी विवरण से अलग करती है। हाल का साहित्य भी समानता को केवल राज्य और समुदाय के द्वंद्व के रूप में नहीं, बल्कि बहुस्तरीय स्वायत्तता और संस्थागत पहुँच के रूप में पढ़ने की आवश्यकता बताता है।²

३. मुस्लिम विवाह-विच्छेद की बहुरूपी संरचना और महिला की प्रारंभिक विधिक स्थिति

३.१ पति-आरंभित, पत्नी-आरंभित और न्यायिक मार्ग

मुस्लिम विवाह-विच्छेद की संरचना में सभी रूप समान नहीं हैं। तलाक-अहसन और तलाक-हसन में समय, पुनर्विचार और वैवाहिक संबंध के पुनर्स्थापन की संभावना का तत्व रहता है, जबकि तलाक-ए-बिद्दत तात्कालिक और अपरिवर्तनीय प्रभाव का दावा करता था। पत्नी की ओर से तलाक-ए-तफवीज उस स्थिति को व्यक्त करता है जिसमें विवाह-विच्छेद की शक्ति वैवाहिक अनुबंध या बाद के समझौते द्वारा पत्नी को प्रत्यायोजित की जाती है। खुला पत्नी की पहल पर वैवाहिक संबंध समाप्त करने का मार्ग है; मुबारात में पृथक्करण की इच्छा पारस्परिक होती है; और फस्ख न्यायालय या विधि द्वारा मान्य सक्षम मंच से विवाह-विघटन प्राप्त करने का साधन है।

इन रूपों की उपस्थिति से यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि ऐतिहासिक व्यवस्था ने पति और पत्नी को समान निकास-शक्ति दी थी। अधिकार का अस्तित्व और उसका उपयोग दो अलग प्रश्न हैं। पति-आरंभित तलाक में एकतरफा घोषणा की शक्ति अधिक प्रत्यक्ष थी, जबकि पत्नी को अनुबंध, प्रतिफल, पति की स्वीकृति की प्रचलित अपेक्षा अथवा न्यायालय में निर्दिष्ट आधार सिद्ध करने की आवश्यकता पड़

सकती थी। महिला आंदोलनों ने इसी अंतर को चुनौती देते हुए धार्मिक स्रोतों के भीतर से महिला नेतृत्व, महिला क्राजियों और न्यायपूर्ण निकाहनामे की मांग विकसित की।³ इससे स्पष्ट होता है कि सुधार केवल राज्य द्वारा ऊपर से आरोपित प्रक्रिया नहीं रहा; समुदाय के भीतर महिला कर्तृत्व ने भी विधिक अर्थों को पुनर्गठित किया है।

३.२ मुस्लिम विवाह-विघटन अधिनियम, १९३९ का महत्त्व

मुस्लिम विवाह-विघटन अधिनियम, १९३९ ने मुस्लिम पत्नी को न्यायालय से विवाह-विच्छेद प्राप्त करने के निश्चित आधार उपलब्ध कराए। पति का चार वर्ष से लापता होना, दो वर्ष तक भरण-पोषण न देना, सात वर्ष या अधिक के कारावास की सजा, तीन वर्ष तक वैवाहिक दायित्वों का निर्वहन न करना, नपुंसकता, मानसिक विकार या निर्दिष्ट रोग, बाल्यावस्था में हुए विवाह का विकल्प और क्रूरता जैसे आधार धारा २ में दिए गए हैं।⁴ इस अधिनियम का मूल योगदान यह था कि महिला का विवाह से बाहर निकलना पूरी तरह पति की इच्छा पर निर्भर नहीं रहा। फिर भी इसकी संरचना आधार-आधारित मुकदमेबाजी पर टिकी है; इसलिए समय, प्रमाण, वकील और न्यायालयी पहुँच की लागत महिला पर पड़ती है।

१९३९ का अधिनियम आज भी अत्यंत महत्वपूर्ण है, पर उसका महत्त्व केवल ऐतिहासिक उपलब्धि में नहीं है। आधुनिक संदर्भ में इसका पुनर्पाठ इसलिए आवश्यक है कि क्रूरता, परित्याग, आर्थिक उपेक्षा और वैवाहिक दायित्वों के उल्लंघन को संविधान के अनुच्छेद १४ और २१ से जुड़ी वास्तविक समानता और गरिमा की कसौटी पर समझा जाए। साथ ही, फस्ख की न्यायालयीय प्रक्रिया को इतना दीर्घ और जटिल नहीं होना चाहिए कि औपचारिक अधिकार व्यवहार में निष्प्रभावी हो जाए।

४. शायरा बानो निर्णय : एकतरफा शक्ति पर संवैधानिक और अंतर्धार्मिक नियंत्रण

वर्ष २०१७ का शायरा बानो बनाम भारत संघ निर्णय आधुनिक मुस्लिम विवाह-विच्छेद विधि का निर्णायक बिंदु है। पाँच न्यायाधीशों की पीठ ने तीन-दो के बहुमत से तलाक-ए-बिद्दत को विधिक प्रभाव से वंचित किया।⁵ किंतु निर्णय को समझते समय यह सावधानी आवश्यक है कि बहुमत का एक ही साझा संवैधानिक तर्क नहीं था। न्यायमूर्ति रोहिंटन नरीमन और न्यायमूर्ति उदय ललित ने १९३७ के अधिनियम के माध्यम से तलाक-ए-बिद्दत को विधि का रूप प्राप्त मानते हुए उसे स्पष्ट मनमानेपन और अनुच्छेद १४ के प्रतिकूल ठहराया। न्यायमूर्ति कुरियन जोसेफ ने निष्कर्ष में उनसे सहमति की, पर उनका प्रमुख आधार यह था कि जो प्रथा

कुरआनी निर्देशों के अनुरूप नहीं है, वह शरीयत अधिनियम द्वारा संरक्षित मुस्लिम स्वीय विधि नहीं हो सकती। मुख्य न्यायाधीश जे. एस. खेहर और न्यायमूर्ति एस. अब्दुल नज़ीर का अल्पमत इसे धार्मिक स्वतंत्रता से संरक्षित मानता था और विधायी हस्तक्षेप की प्रतीक्षा करना चाहता था।

इस बहुवचन तर्क-रचना का महिला अधिकारों पर गहरा प्रभाव है। निर्णय ने यह स्पष्ट किया कि पति की व्यक्तिगत घोषणा वैवाहिक स्थिति को बिना किसी न्यूनतम न्यायसंगत प्रक्रिया के समाप्त करने वाली अनियंत्रित शक्ति नहीं हो सकती। साथ ही, यह निर्णय बताता है कि सुधार के स्रोत केवल संविधान के बाहरी परीक्षण में नहीं, धार्मिक विधि के आंतरिक न्याय-सिद्धांतों में भी खोजे जा सकते हैं। सप्तर्षि मंडल ने इस अंतर्धार्मिक पुनर्पाठ और मुस्लिम महिला समूहों की सक्रिय भागीदारी को वैयक्तिक विधि सुधार की नई दिशा के रूप में देखा है।⁶

फिर भी शायरा बानो को महिला मुक्ति का पूर्ण समाधान कहना उचित नहीं होगा। निर्णय ने तलाक-ए-बिद्दत की वैधता का उत्तर दिया, पर विवाह के टूटे सामाजिक संबंध, परित्याग, निवास, तत्काल आय, बच्चों की देखभाल और लंबित मुकदमेबाजी का स्वतः समाधान नहीं किया। इसके अतिरिक्त, धर्मनिरपेक्षता और धार्मिक सुधार की भाषा कभी-कभी महिला की ठोस आवश्यकताओं से अधिक समुदाय और राष्ट्र की राजनीतिक छवियों पर केंद्रित हो सकती है। रेडिंग ने निर्णय में धर्मनिरपेक्ष और सांप्रदायिक तर्कों के परस्पर उलझाव की आलोचना की है,⁷ जबकि उम्मुल फ़ैज़ा ने महिला अधिकार और अल्पसंख्यक अधिकार के बीच बदलते नारीवादी विमर्श को रेखांकित किया है।⁸ अतः न्यायिक निषेध को आर्थिक और प्रक्रियात्मक अधिकारों से जोड़ना आवश्यक है।

५. वर्ष २०१९ का अधिनियम : संरक्षण, अपराधीकरण और उसके अंतर्विरोध

५.१ अधिनियम की अधिकार-संरचना

मुस्लिम महिला (विवाह पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, २०१९ ने तलाक-ए-बिद्दत अथवा उसी प्रकार के तात्कालिक और अपरिवर्तनीय प्रभाव वाले तलाक की घोषणा को शून्य और अवैध घोषित किया। अधिनियम बोले गए, लिखित, इलेक्ट्रॉनिक या अन्य माध्यम से की गई ऐसी घोषणा को अपने क्षेत्र में लाता है। पति द्वारा इस घोषणा के लिए तीन वर्ष तक कारावास और जुर्माने का प्रावधान है। साथ ही विवाहित मुस्लिम महिला को अपने और आश्रित बच्चों के लिए निर्वाह भत्ता तथा नाबालिग बच्चों की अभिरक्षा का दावा करने का अधिकार दिया गया है। अपराध की सूचना महिला या उसके रक्त अथवा वैवाहिक संबंधी द्वारा

दी जा सकती है; समझौता महिला की पहल पर मजिस्ट्रेट की अनुमति से हो सकता है; और जमानत से पहले महिला को सुनना आवश्यक है।⁹

इस प्रकार अधिनियम ने केवल निषेध नहीं किया, बल्कि तत्काल संरक्षण के कुछ दीवानी स्वरूप भी जोड़े। यह प्रतीकात्मक परिवर्तन महत्वपूर्ण है: अब पति की घोषणा स्वयं विवाह समाप्त नहीं करती और महिला को "तलाकशुदा" मानकर घर से निकालने का विधिक आधार नहीं बन सकती। किंतु विवाह की तकनीकी निरंतरता और दांपत्य संबंध की व्यावहारिक समाप्ति के बीच तनाव बना रहता है। महिला विवाह में विधिक रूप से बनी रह सकती है, जबकि वास्तविक जीवन में उसे परित्याग, हिंसा या आर्थिक बहिष्कार का सामना करना पड़ सकता है।

५.२ शून्य घोषणा को अपराध बनाने की समस्या

अपराधीकरण पर विद्वत् मत विभाजित है। समर्थक दृष्टि के अनुसार केवल शून्यता पर्याप्त निरोध उत्पन्न नहीं करती; दंड प्रथा की सामाजिक गंभीरता को व्यक्त करता है और महिला की गरिमा की सार्वजनिक मान्यता है। दूसरी ओर आलोचनात्मक दृष्टि पूछती है कि जब घोषणा का वैवाहिक प्रभाव शून्य है, तब तीन वर्ष की कारावास-व्यवस्था किस विशिष्ट हानि का आनुपातिक उत्तर है। सिद्दीकी ने इस कानून को महिला-सुरक्षा, धार्मिक स्वायत्तता और राजनीतिक संदर्भ के त्रिकोण में पढ़ने की आवश्यकता बताई है।¹⁰ श्रद्धा चौधरी ने इसे "वस्तु-विहीन अपराधीकरण" कहते हुए दंड-विधि के औचित्य और मुस्लिम परिवारों की भौतिक असुरक्षा पर प्रश्न उठाया है।¹¹

यह आलोचना मात्र सैद्धांतिक नहीं है। यदि पति परिवार का प्रमुख आय-स्रोत है, तो कारावास महिला और बच्चों की निर्वाह-वसूली को कठिन बना सकता है। इसके विपरीत, दंड की अनुपस्थिति में घोषणा, परित्याग और सामाजिक दबाव के विरुद्ध विधि कमजोर भी पड़ सकती है। इसलिए उचित प्रश्न "दंड होना चाहिए या नहीं" का सरल द्विभाजन नहीं, बल्कि यह है कि दंड किस परिस्थिति में, किस प्रमाण पर, किस सुरक्षा के साथ और किन वैकल्पिक या पूरक उपायों के बाद प्रयोग किया जाए। नाज़िमा परवीन का क्षेत्र-आधारित अध्ययन दिखाता है कि कानून का अर्थ न्यायालय, पुलिस, समुदाय और स्वयं महिला द्वारा अलग-अलग ढंग से ग्रहण और उपयोग किया जाता है।¹² इससे किसी भी प्रभावशीलता-दावे के लिए व्यवस्थित आधिकारिक आँकड़ों और स्वतंत्र मूल्यांकन की आवश्यकता स्पष्ट होती है।

अधिनियम की संरचना में एक और अंतर है। निर्वाह भत्ता और अभिरक्षा का अधिकार तो दिया गया है, पर उनकी निर्धारण-पद्धति, वित्तीय प्रकटीकरण, अंतरिम आदेश की

समय-सीमा और अन्य विधियों के अंतर्गत मिलने वाली राहतों से समायोजन का विस्तृत तंत्र नहीं दिया गया। परिणामतः महिला को समान तथ्य-समूह के लिए अनेक मंचों पर जाना पड़ सकता है। दंडात्मक सुरक्षा तभी सार्थक होगी जब उसे निवास, आय, बाल-देखभाल और शीघ्र न्याय से जोड़ा जाए।

६. खुला और महिला-प्रेरित विवाह-विच्छेद : आश्रित अनुमति से स्वायत्त चयन की ओर

६.१ केरल उच्च न्यायालय की नवीन व्याख्या

महिला अधिकारों के बदलते स्वरूप का सबसे महत्वपूर्ण, किंतु अपेक्षाकृत कम चर्चित क्षेत्र खुला है। एक पारंपरिक प्रशासनिक समझ में खुला को पति द्वारा पत्नी के प्रस्ताव की स्वीकृति से पूर्ण होने वाला समझौता माना जाता रहा। इससे पति की असहमति महिला के निकास-अधिकार पर प्रभावी निषेधाधिकार बन जाती थी। केरल उच्च न्यायालय ने एक्स बनाम वाई में इस स्थिति का पुनर्विचार करते हुए कहा कि मुस्लिम पत्नी को खुला द्वारा विवाह समाप्त करने का स्वतंत्र अधिकार है और पति की सहमति उसकी वैधता की पूर्वशर्त नहीं है। न्यायालय ने मेल-मिलाप का प्रयास, पत्नी की स्पष्ट और स्वतंत्र इच्छा तथा मेहर या प्रतिफल लौटाने की पेशकश जैसे तत्वों पर ध्यान दिया।¹³

पुनर्विचार कार्यवाही में भी मूल दृष्टि को कायम रखा गया और यह दोहराया गया कि पति पत्नी को अनिच्छित विवाह में बने रहने के लिए बाध्य नहीं कर सकता।¹⁴ यह व्याख्या महिला की स्थिति में गुणात्मक परिवर्तन करती है। यहाँ महिला केवल पति से तलाक "मांगने" वाली नहीं, बल्कि अपनी वैवाहिक स्वायत्तता का प्रयोग करने वाली विधिक कर्ता है। फिर भी यह ध्यान रखना चाहिए कि यह उच्च न्यायालयीय व्याख्या है; देश भर में समान वैधानिक प्रक्रिया के अभाव में अन्य न्यायालय अलग दृष्टि अपना सकते हैं।

६.२ अधिकार, प्रक्रिया और वैवाहिक स्थिति का प्रमाण

खुला को स्वतंत्र अधिकार मान लेने के बाद अगला प्रश्न उसकी प्रक्रिया का है। क्या पत्नी का एकतरफा लिखित कथन पर्याप्त है? पति तक संचार कैसे सिद्ध होगा? मेल-मिलाप का प्रयत्न किस प्रकार और किस सीमा तक आवश्यक है? प्रतिफल पर असहमति विवाह-विच्छेद को रोकेगी या केवल आर्थिक विवाद बनेगी? और परिवार न्यायालय किस प्रकृति की घोषणा देगा? यदि इन प्रश्नों का उत्तर स्पष्ट न हो, तो अधिकार स्वयं नए विवादों का स्रोत बन सकता है। इसलिए स्वायत्तता का अर्थ प्रक्रिया-विहीनता नहीं है; प्रक्रिया का उद्देश्य पति को निषेधाधिकार देना नहीं, बल्कि पत्नी की स्वतंत्र इच्छा, संचार, तारीख और वैवाहिक स्थिति का विश्वसनीय अभिलेख बनाना होना चाहिए।

महिला क्राज़ियों और महिला-नेतृत्व वाले शरीयत मंचों पर हुए नवीन नृवंशविज्ञान संबंधी अध्ययन बताते हैं कि महिलाएँ केवल राज्य न्यायालय की भाषा में न्याय नहीं खोजतीं। वे धार्मिक वैधता, पारिवारिक बातचीत, आर्थिक समझौते और सामाजिक स्वीकार्यता को भी महत्व देती हैं।¹⁵ साथ ही गैर-राज्य मंचों के बीच सहयोग और प्रतिस्पर्धा महिला की कर्तृत्व-क्षमता को कभी विस्तार और कभी सीमा प्रदान करते हैं।¹⁶ अतः सुधार का लक्ष्य धार्मिक मंचों को नकारना नहीं, बल्कि यह सुनिश्चित करना होना चाहिए कि उनका परामर्श महिला की स्वतंत्र सहमति पर आधारित हो और अंतिम विधिक स्थिति सक्षम राज्य न्यायालय या पंजीकरण व्यवस्था द्वारा सत्यापित हो।

तेलंगाना उच्च न्यायालय ने मोहम्मद आरिफ अली बनाम अफसरुन्निसा में वर्ष २०२५ में इसी दिशा को आगे बढ़ाया। न्यायालय ने खुला में पति की स्वीकृति को अनिवार्य न मानते हुए पारिवारिक न्यायालय की भूमिका को वैवाहिक स्थिति की न्यायिक पुष्टि से जोड़ा।¹⁷ यह निर्णय अखिल भारतीय बाध्यकारी मिसाल नहीं है, पर केरल और तेलंगाना की व्याख्याएँ मिलकर एक प्रभावशाली न्यायिक प्रवृत्ति बनाती हैं पत्नी की इच्छा को केंद्र में रखना, पति की असहमति को वैवाहिक बंधन की स्थायी दीवार न बनने देना और आर्थिक प्रश्नों को विवाह-विच्छेद की मूल स्वायत्तता से अलग करना।

७. विवाह-विच्छेदोत्तर आर्थिक अधिकार : इद्दत से भविष्य-सुरक्षा और बहु-स्रोत उपचार तक

७.१ वर्ष १९८६ के अधिनियम की वर्तमान भूमिका

मुस्लिम स्त्री (विवाह-विच्छेद पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, १९८६ के अंतर्गत तलाकशुदा मुस्लिम महिला उचित और न्यायसंगत प्रावधान तथा भरण-पोषण, मेहर और उसे दी गई संपत्तियों की वापसी का दावा कर सकती है। धारा ३ पति पर इद्दत अवधि के भीतर उचित और न्यायसंगत प्रावधान करने और भुगतान का दायित्व रखती है; धारा ४ कुछ स्थितियों में रिश्तेदारों और वक्फ बोर्ड की जिम्मेदारी की व्यवस्था करती है; धारा ५ तत्कालीन दंड प्रक्रिया संहिता के सामान्य भरण-पोषण प्रावधानों को चुनने का विकल्प देती थी।¹⁸ वर्तमान समीक्षा का महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या यह विशेष अधिनियम सामान्य धर्म-निरपेक्ष भरण-पोषण उपचार को विस्थापित करता है।

७.२ भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता और मोहम्मद अब्दुल समद

भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, २०२३ की धारा १४४ पत्नी, बच्चों और माता-पिता के लिए त्वरित भरण-पोषण की धर्म-निरपेक्ष व्यवस्था आगे बढ़ाती है। “पत्नी” में वह स्त्री भी सम्मिलित है जिसे पति ने तलाक दिया है या जिसने पति से

तलाक प्राप्त किया है और जिसने पुनर्विवाह नहीं किया।¹⁹ यद्यपि मोहम्मद अब्दुल समद का विवाद पूर्व दंड प्रक्रिया संहिता की धारा १२५ से संबंधित था, उच्चतम न्यायालय का सिद्धांत नई समतुल्य व्यवस्था की व्याख्या के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

मोहम्मद अब्दुल समद बनाम तेलंगाना राज्य में उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट किया कि वर्ष १९८६ का अधिनियम सामान्य भरण-पोषण उपचार का स्थानापन्न या उसे निरस्त करने वाला विधान नहीं है। तलाकशुदा मुस्लिम महिला विशेष अधिनियम और सामान्य कल्याणकारी प्रावधान दोनों में से किसी एक या दोनों का सहारा ले सकती है; आवश्यक होने पर दोहरी वसूली रोकने के लिए समायोजन किया जाना चाहिए।²⁰ यह निर्णय महिला अधिकार को “धर्म-विशिष्ट अपवाद” के रूप में नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय के सामान्य नागरिक उपचार के साथ सह-अस्तित्व रखने वाले अतिरिक्त अधिकार के रूप में स्थापित करता है।

इस परिवर्तन का वैचारिक महत्व व्यापक है। भरण-पोषण अब केवल इद्दत की अवधि का प्रश्न नहीं रहता; वह विवाह से उत्पन्न आर्थिक निर्भरता, जीवन-स्तर, आय-असमानता और गरिमापूर्ण अस्तित्व से जुड़ा है। साथ ही विशेष अधिनियम का उचित एवं न्यायसंगत प्रावधान एकमुश्त या भविष्य-सुरक्षा का अलग स्वरूप रख सकता है, जबकि धारा १४४ आवधिक निर्वाह का त्वरित साधन हो सकती है। दोनों को प्रतिस्पर्धी मानने के बजाय पूरक मानना महिला-केंद्रित व्याख्या है।

७.३ वित्तीय प्रकटीकरण, अंतरिम राहत और आदेशों का समायोजन

बहु-स्रोत अधिकार तभी लाभकारी हैं जब महिला को प्रत्येक मंच पर शून्य से मुकदमा न लड़ना पड़े। राजनेश बनाम नेहा में उच्चतम न्यायालय ने भरण-पोषण मामलों में संपत्ति और देनदारियों के मानकीकृत प्रकटीकरण, समानांतर कार्यवाहियों की जानकारी, पूर्व आदेशों के समायोजन, आवेदन की तारीख से भरण-पोषण और प्रभावी प्रवर्तन के लिए व्यापक दिशानिर्देश दिए।²¹ ये दिशानिर्देश मुस्लिम महिला के लिए विशेष रूप से उपयोगी हैं, क्योंकि उसे वर्ष १९८६ के अधिनियम, घरेलू हिंसा से संरक्षण संबंधी विधि, वर्ष २०१९ के अधिनियम और सामान्य भरण-पोषण व्यवस्था के बीच जाना पड़ सकता है।

शाहजहाँ बनाम उत्तर प्रदेश राज्य में उच्चतम न्यायालय ने वर्ष २०२५ में दो महत्वपूर्ण बातें दोहराईं। पहली, दारुल क़ज़ा या क़ाज़ी द्वारा दिया गया निर्णय राज्य न्यायालय के बाध्यकारी निर्णय के समान विधिक मान्यता नहीं रखता। दूसरी, महिला के भरण-पोषण दावे को अनुमान, सामाजिक

रूढ़ि या अस्पष्ट धार्मिक दस्तावेज़ के आधार पर अस्वीकार नहीं किया जा सकता; न्यायालय को लागू विधि और प्रमाण पर निर्णय देना होगा।²² इससे वैवाहिक स्थिति की न्यायिक निश्चितता और आर्थिक अधिकार के बीच सीधा संबंध स्थापित होता है।

कन्नडन अनवर सलीह बनाम सफीखत में केरल उच्च न्यायालय ने वर्ष २०२५ में कहा कि सामान्य भरण-पोषण और वर्ष १९८६ के अधिनियम के अधिकार मात्र समानांतर दावा दायर करने से समाप्त नहीं हो जाते। वास्तविक भुगतान और विधिसम्मत समायोजन निर्णायक हैं। न्यायालय ने यह भी माना कि उचित एवं न्यायसंगत प्रावधान का अधिकार तलाक के समय उत्पन्न होता है; कार्यवाही में विलंब या बाध की घटनाएँ उस अर्जित अधिकार को स्वतः निष्फल नहीं करती।²³ यह दृष्टि कागजी आदेश के बजाय वास्तविक आर्थिक प्राप्ति को महत्व देती है।

७.४ निवास, संरक्षण, मेहर और बाल-अभिरक्षा

विवाह-विच्छेद के बाद आर्थिक सुरक्षा को केवल मासिक धनराशि तक सीमित नहीं किया जा सकता। मेहर वैवाहिक अनुबंध से उत्पन्न पृथक दायित्व है; पत्नी की निजी संपत्ति और उपहारों की वापसी अलग अधिकार हैं; और सुरक्षित निवास के बिना भरण-पोषण की राशि अपर्याप्त हो सकती है। महिलाओं का घरेलू हिंसा से संरक्षण अधिनियम, २००५ साझा गृह में निवास, संरक्षण आदेश, निवास आदेश और मौद्रिक राहत जैसे धर्म-निरपेक्ष उपचार देता है।²⁴ वर्ष २०१९ का अधिनियम निर्वाह भत्ता और नाबालिग बच्चों की अभिरक्षा की व्यवस्था जोड़ता है, पर इन आदेशों का अन्य मंचों के आदेशों से समन्वय अभी स्पष्ट प्रक्रिया पर निर्भर नहीं है।

बाल-अभिरक्षा में माता या पिता का अमूर्त दावा नहीं, बच्चे का सर्वोत्तम हित केंद्रीय होना चाहिए। विवाह-विच्छेद के रूप, पति की आपराधिक कार्यवाही या मेहर संबंधी विवाद को इस प्रकार नहीं पढ़ा जाना चाहिए कि बच्चा शिक्षा, स्वास्थ्य और नियमित निर्वाह से वंचित हो। इस क्षेत्र में महिला अधिकार और बाल अधिकार परस्पर विरोधी नहीं; महिला की स्थिर आय और निवास प्रायः बच्चे की सुरक्षा की पूर्वशर्त होते हैं।

८. संवैधानिक परिवर्तन : समानता, गरिमा, धार्मिक स्वतंत्रता और महिला कर्तृत्व

मुस्लिम विवाह-विच्छेद विधि की संवैधानिक समीक्षा में अनुच्छेद १४, १५, २१ और २५ एक-दूसरे से पृथक द्वीप नहीं हैं। समानता केवल समान शब्दों का प्रयोग नहीं, बल्कि वास्तविक शक्ति-असमानता का प्रत्युत्तर है। गैर-भेदभाव का सिद्धांत महिला को धर्म और लिंग के अंतर्संबंध पर उत्पन्न

प्रतिकूलता से बचाता है। गरिमा में वैवाहिक स्वायत्तता, सुरक्षित आश्रय, निजी निर्णय और न्यूनतम आर्थिक साधन सम्मिलित हैं। धार्मिक स्वतंत्रता भी महत्वपूर्ण है, पर वह अन्य मौलिक अधिकारों और सामाजिक सुधार की संवैधानिक संरचना के भीतर कार्य करती है।²⁵

इस संतुलन में दो अतियों से बचना चाहिए। पहली अति मुस्लिम महिला को केवल समुदाय की “पीड़िता” के रूप में प्रस्तुत कर राज्य के दंडात्मक हस्तक्षेप को ही मुक्ति मानती है। दूसरी अति समुदाय की स्वायत्तता के नाम पर महिला की स्वतंत्र आवाज़ को धार्मिक प्रतिनिधियों की सहमति में विलीन कर देती है। रत्ना कपूर ने धर्म, लैंगिक समानता और बहुसंख्यक राष्ट्रवाद के अंतर्संबंध में न्यायिक विमर्श की जटिलता रेखांकित की है।²⁶ जस्टिन जोन्स का नवीन अध्ययन बताता है कि भारत में मुस्लिम महिला सक्रियता ने कुरआनी पुनर्पाठ और संवैधानिक समानता को परस्पर विरोधी मानने के बजाय एक संयुक्त सुधार-भाषा के रूप में विकसित किया है।²⁷

इसलिए बदलते महिला अधिकारों का सही वर्णन “राज्य बनाम धर्म” से अधिक व्यापक है। इसमें न्यायालय, विधानमंडल, महिला संगठन, महिला क्रांती, परिवार न्यायालय, विधिक सेवा संस्थाएँ और स्वयं वादकारी महिला सभी अर्थ-निर्माता हैं। महिला की आवाज़ को केंद्र में रखना तभी संभव है जब समझौता स्वतंत्र हो, सुलह हिंसक संबंध में लौटने का दबाव न बने, धार्मिक प्रमाणपत्र न्यायालय के विकल्प के रूप में न थोपा जाए, और विधिक सहायता भाषा तथा आर्थिक क्षमता की बाधाओं को कम करे।

९. वैवाहिक स्थिति, गैर-राज्य मंच और प्रक्रियात्मक न्याय

भारत की मुस्लिम विवाह-विच्छेद व्यवस्था विधिक बहुलता से चिह्नित है। एक ही विवाद में परिवार न्यायालय, मजिस्ट्रेट, पुलिस, दारुल क़ज़ा, क़ाज़ी, महिला संगठन और मध्यस्थ भाग ले सकते हैं। यह बहुलता कभी सुलभता और सांस्कृतिक स्वीकार्यता बढ़ाती है, पर कभी अधिकारिता, अंतिमता और प्रवर्तन को अस्पष्ट कर देती है। कैथरीन लेमन्स का अध्ययन दिखाता है कि धार्मिक मंच और राज्य विधि अलग-अलग समानांतर जगत नहीं, बल्कि परस्पर काटती व्यवस्थाएँ हैं।²⁸ इसी कारण केवल यह कहना पर्याप्त नहीं कि गैर-राज्य मंच “मान्य” या “अमान्य” हैं; प्रश्न यह है कि उनकी भूमिका परामर्शात्मक है या बाध्यकारी, महिला की सहमति कितनी स्वतंत्र है, और अंतिम विधिक स्थिति कहाँ दर्ज होती है।

उच्चतम न्यायालय की नवीन दिशा के अनुसार धार्मिक सलाह या फ़तवा स्वयं बाध्यकारी न्यायिक आदेश नहीं है।

राज्य न्यायालय को विवाह-विच्छेद की वैधता, भरण-पोषण और अभिरक्षा पर अपना स्वतंत्र निर्णय देना होगा। इस सिद्धांत का उद्देश्य धार्मिक आस्था को अस्वीकार करना नहीं, बल्कि निजी व्यक्ति या संस्था को राज्य-समान दंडात्मक या स्थिति-निर्धारक शक्ति से रोकना है। गैर-राज्य मंच महिला को परामर्श, सामुदायिक संवाद और समझौते में सहायता दे सकते हैं; पर वे उसकी न्यायालयीय पहुँच बंद नहीं कर सकते। इस जटिल अंतर्संबंध पर नवीन शोध भी बताता है कि धार्मिक और राज्य मंचों के बीच मामलों की आवाजाही भारतीय धर्मनिरपेक्षता की वास्तविक कार्यप्रणाली का हिस्सा है।²⁹

प्रक्रियात्मक न्याय की दृष्टि से विवाह-विच्छेद का सत्यापन योग्य अभिलेख अत्यंत आवश्यक है। लिखित सूचना, प्राप्ति का प्रमाण, घोषणा या खुला की प्रभावी तारीख, मेहर और संपत्ति का विवरण, बच्चों की अस्थायी व्यवस्था और लंबित कार्यवाहियों का उल्लेख एक मानकीकृत अभिलेख में होना चाहिए। इससे पुनर्विवाह, उत्तराधिकार, जन्म प्रमाणपत्र, बैंक खाते, बीमा, भरण-पोषण और अभिरक्षा संबंधी भविष्य के विवाद कम हो सकते हैं। परिवार न्यायालय अधिनियम सुलह और वैवाहिक स्थिति संबंधी अधिकारिता देता है, पर सुलह को महिला की इच्छा पर हावी नहीं होने देना चाहिए।³⁰

१०. इलेक्ट्रॉनिक घोषणा और प्रमाण की नई चुनौती

संदेश, ध्वनि अभिलेख, दृश्य अभिलेख, सामाजिक माध्यम और इलेक्ट्रॉनिक डाक के प्रसार ने विवाह-विच्छेद विवाद में नई समस्याएँ उत्पन्न की हैं। वर्ष २०१९ का अधिनियम इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से की गई तलाक-ए-बिद्दत अथवा समान तात्कालिक घोषणा को भी अपने क्षेत्र में रखता है।³¹ ऐसी घोषणा विवाह समाप्त नहीं करती, पर वह अपराध, परित्याग, मानसिक हिंसा, निवास से निष्कासन या आर्थिक उपेक्षा के प्रमाण के रूप में प्रासंगिक हो सकती है।

इलेक्ट्रॉनिक सामग्री में प्रेषक की पहचान, उपकरण का नियंत्रण, संदेश की पूर्णता, संपादन की संभावना, तारीख, संदर्भ और प्राप्ति सिद्ध करनी पड़ती है। भारतीय साक्ष्य अधिनियम, २०२३ ने इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख की विधिक प्रभावशीलता और ग्राह्यता के लिए धाराएँ ६१ से ६३ में रूपरेखा दी है।³² किंतु परिवार-विवाद में तकनीकी प्रमाण की मांग इतनी कठोर भी नहीं होनी चाहिए कि संसाधनहीन महिला प्राथमिक संरक्षण से वंचित हो जाए। अंतरिम राहत के लिए प्रथमदृष्टया सामग्री पर्याप्त हो सकती है, जबकि अंतिम आपराधिक निष्कर्ष के लिए अधिक कठोर प्रमाणीकरण अपेक्षित होगा।

डिजिटल संदर्भ महिला अधिकारों के बदलते स्वरूप की दोहरी प्रकृति दिखाता है। एक ओर इलेक्ट्रॉनिक संदेश परित्याग और अपमान का त्वरित माध्यम बन सकता है; दूसरी ओर वही अभिलेख घोषणा, धमकी, धन-लेनदेन और संचार का स्थायी प्रमाण भी बन सकता है। इसलिए पुलिस, मजिस्ट्रेट और परिवार न्यायालय के लिए पृथक प्रमाण-संरक्षण निर्देश, मूल उपकरण की सुरक्षित प्रतिलिपि, गोपनीयता और त्वरित सहायता की व्यवस्था आवश्यक है।

११. बदलते स्वरूप का समेकित मूल्यांकन

११.१ उपलब्धियाँ

पिछले दशक की विधि से पाँच स्पष्ट उपलब्धियाँ उभरती हैं। प्रथम, तलाक-ए-बिद्दत पति की ऐसी घोषणा नहीं रही जो तत्काल और अपरिवर्तनीय रूप से विवाह समाप्त कर दे। द्वितीय, खुला संबंधी नवीन न्यायिक व्याख्या पत्नी की इच्छा को पति की स्वीकृति से ऊपर रखती है। तृतीय, सामान्य भरण-पोषण और वर्ष १९८६ के विशेष अधिकारों को पूरक माना गया है। चतुर्थ, धार्मिक मंचों के निर्णय को राज्य न्यायालय पर बाध्यकारी न मानकर महिला की विधिक पहुँच सुरक्षित की गई है। पंचम, इलेक्ट्रॉनिक घोषणा और प्रमाण को विधायी रूप से स्वीकार कर आधुनिक संचार की वास्तविकता को विधि में स्थान मिला है।

इन उपलब्धियों से महिला की विधिक पहचान बदलती है। वह अब केवल निषिद्ध तीन तलाक से संरक्षित व्यक्ति नहीं, बल्कि विवाह-विच्छेद आरंभ करने वाली, वैवाहिक स्थिति की घोषणा मांगने वाली, अनेक आर्थिक उपचारों का चयन करने वाली और राज्य व समुदाय दोनों से उत्तरदायित्व मांगने वाली नागरिक है। यह परिवर्तन अधिकार की भाषा को संरक्षण से स्वायत्तता की ओर विस्तृत करता है।

११.२ शेष कमियाँ

फिर भी अधिकारों की वर्तमान संरचना खंडित है। अलग-अलग अधिनियम अलग मंच, अलग आवेदन, अलग प्रमाण और अलग प्रवर्तन व्यवस्था देते हैं। विवाह-विच्छेद की वैधता परिवार न्यायालय में, वर्ष १९८६ का दावा मजिस्ट्रेट के समक्ष, घरेलू हिंसा की राहत दूसरी कार्यवाही में और वर्ष २०१९ की शिकायत आपराधिक प्रक्रिया में जा सकती है। वित्तीय जानकारी साझा न होने से आदेशों में विरोध या दोहरी गणना का जोखिम रहता है। राजनेश दिशानिर्देश इस समस्या को कम करते हैं, पर उनके समान अनुपालन के लिए स्थानीय नियम और न्यायिक प्रशिक्षण चाहिए।

खुला की प्रक्रिया में अखिल भारतीय वैधानिक स्पष्टता नहीं है। केरल और तेलंगाना की प्रगतिशील व्याख्याएँ प्रभावशाली हैं, पर अलग न्यायालयों में पति की स्वीकृति, प्रतिफल और धार्मिक प्रमाणपत्र की भूमिका पर भिन्नता बनी

रह सकती है। वर्ष २०१९ के अधिनियम में दंड के साथ पर्याप्त पुनर्वास-व्यवस्था नहीं है। निर्वाह भत्ता का अधिकार है, पर वसूली की संस्थागत कठिनाइयाँ बनी रहती हैं। आधिकारिक आँकड़ों का अभाव कानून की वास्तविक प्रभावशीलता, गिरफ्तारी, समझौते, दोषसिद्धि, आर्थिक भुगतान और महिला-संतोष का निष्पक्ष मूल्यांकन कठिन बनाता है।

सबसे महत्वपूर्ण कमी अधिकार और परिणाम के बीच है। शून्य घोषणा के बाद भी महिला घर से बाहर हो सकती है; खुला की इच्छा व्यक्त करने के बाद भी वैवाहिक स्थिति का प्रमाण महीनों तक न मिल सकता है; भरण-पोषण आदेश के बावजूद भुगतान न हो सकता है। अतः कानून की सफलता का मानक केवल निर्णय या धारा नहीं, बल्कि समयबद्ध स्थिति-निर्धारण, धन की वास्तविक प्राप्ति, सुरक्षित निवास और बच्चों की निरंतर देखभाल होना चाहिए।

१२. सुधार के लिए प्रस्तावित दिशा

१२.१ समान न्यूनतम प्रक्रिया, विविध विधिसम्मत रूप

भारत को विवाह-विच्छेद के सभी धार्मिक रूपों को समाप्त करने वाली एकरूपता की आवश्यकता नहीं; पर प्रत्येक विधिसम्मत रूप के लिए समान न्यूनतम प्रक्रिया आवश्यक है। इसमें लिखित सूचना, प्रमाणित सेवा, स्पष्ट प्रभावी तारीख, हिंसा-मुक्त सुलह का सीमित अवसर, वैवाहिक स्थिति का पंजीकरण और आर्थिक अधिकारों की प्रारंभिक सूची सम्मिलित होनी चाहिए। सुलह का उद्देश्य विवाह हर कीमत पर बचाना नहीं, बल्कि स्वतंत्र और सूचित निर्णय सुनिश्चित करना होना चाहिए। हिंसा, जबरदस्ती या गंभीर असुरक्षा में सुलह से अपवाद दिया जाना चाहिए।

१२.२ महिला-प्रेरित विवाह-विच्छेद की स्पष्ट वैधानिक प्रक्रिया

खुला, तलाक-ए-तफवीज और फस्ख के लिए सरल, समयबद्ध और गैर-भेदभावकारी प्रक्रिया बनाई जानी चाहिए। खुला में पति की असहमति विवाह जारी रखने का निषेधाधिकार न बने। मेहर या प्रतिफल पर विवाद को पृथक आर्थिक प्रश्न माना जा सकता है; वह महिला की स्वतंत्र निकास-इच्छा को अनिश्चित काल तक रोकने का आधार नहीं होना चाहिए। परिवार न्यायालय को संक्षिप्त सत्यापन के बाद वैवाहिक स्थिति की घोषणा देने और संबंधित आर्थिक विवाद को आवश्यक साक्ष्य के साथ तय करने की शक्ति स्पष्ट हो। संहिताकरण पर नवीन बहस भी दिखाती है कि महिला संगठन धार्मिक, संवैधानिक और अंतरराष्ट्रीय समानता-स्रोतों को जोड़कर न्यायपूर्ण परिवार-विधि का प्रारूप विकसित कर सकते हैं।³³

१२.३ एकल-खिड़की अंतरिम राहत और वित्तीय समन्वय

महिला को अलग-अलग न्यायालयों में तत्काल निवास, निर्वाह, संरक्षण और बाल-अभिरक्षा के लिए पृथक आवेदन न देना पड़े। परिवार न्यायालय अथवा नामित मजिस्ट्रेट को एकल-खिड़की अंतरिम राहत का अधिकार दिया जा सकता है, जो संबंधित अधिनियमों के अंतर्गत उपलब्ध अंतिम अधिकारों को प्रभावित किए बिना प्रारंभिक सुरक्षा दे। सभी भरण-पोषण कार्यवाहियों में समान वित्तीय प्रकटीकरण, पूर्व आदेशों की अनिवार्य घोषणा और भुगतान का समायोजन हो। आदेश की प्रति साझा इलेक्ट्रॉनिक न्यायिक व्यवस्था में उपलब्ध हो, ताकि विरोधी आदेश और दोहरी वसूली दोनों रोके जा सकें।

१२.४ दंडात्मक व्यवस्था का प्रमाण-आधारित पुनर्मूल्यांकन

वर्ष २०१९ के अधिनियम की दंडात्मक व्यवस्था का मूल्यांकन राजनीतिक दावे के बजाय आधिकारिक आँकड़ों से होना चाहिए। कितनी शिकायतें दर्ज हुईं, कितनी गिरफ्तारियाँ हुईं, जमानत और समझौते का स्वरूप क्या रहा, कितनी महिलाओं को निर्वाह भत्ता वास्तव में मिला, तथा कारावास ने पारिवारिक आय को कैसे प्रभावित किया इन प्रश्नों पर गोपनीयता-सम्मत आँकड़े प्रकाशित किए जाएँ। यदि कम प्रतिबंधकारी दीवानी या प्रशासनिक उपाय समान या बेहतर संरक्षण दे सकते हैं, तो आनुपातिकता की कसौटी पर दंड की अवधि और प्रक्रिया की समीक्षा की जानी चाहिए। साथ ही, संज्ञेयता, समझौता और जमानत में महिला की सुनवाई संबंधी सुरक्षा का कठोर पालन आवश्यक है।³⁴

१२.५ पंजीकरण, इलेक्ट्रॉनिक प्रमाण और संस्थागत क्षमता

विवाह और विवाह-विच्छेद का सुलभ, न्यून-शुल्क और गोपनीयता-सम्मत पंजीकरण विकसित किया जाए। पंजीकरण धार्मिक रूप की वैधता का प्रतिस्थापन न होकर उसकी विधिक तारीख और स्थिति का अभिलेख हो। इलेक्ट्रॉनिक घोषणा के मामलों में पुलिस और न्यायालय को संदेश-संरक्षण, उपकरण की प्रतिलिपि, प्रेषक-पहचान और प्रमाणपत्र की सरल निर्देशिका दी जाए। न्यायाधीश, मजिस्ट्रेट, पुलिस, मध्यस्थ और विधिक सेवा कर्मियों का विशेष प्रशिक्षण हो, जिसमें मुस्लिम विवाह-विच्छेद के भिन्न रूप, महिला की स्वायत्तता, बाल हित और आर्थिक समायोजन सम्मिलित हों।

१२.६ महिला की आवाज़ और समुदाय-अंतर्गत सुधार

किसी भी सुधार की वैधता केवल संसद या न्यायालय से नहीं आएगी। मुस्लिम महिलाओं के विविध अनुभव, महिला

क्राज़ियों, स्थानीय संगठनों, विधि-सहायता कार्यकर्ताओं और अलग-अलग विधि-मतों की भागीदारी आवश्यक है। शर्तयुक्त निकाहनामा तलाक-ए-तफवीज, निवास, शिक्षा, रोजगार, मेहर और वैवाहिक संपत्ति संबंधी अपेक्षाएँ पहले से स्पष्ट कर सकता है। फ्लाविया एग्रेस ने शर्तयुक्त निकाहनामे को सामुदायिकीकृत राजनीति के बीच संभावित सुधार-साधन के रूप में परखा है।³⁵ परिवार-विधि सुधार पर विधि आयोग का परामर्श भी चरणबद्ध और भेदभाव-निवारक सुधार की दिशा को महत्त्व देता है।³⁶

१३. निष्कर्ष

मुस्लिम विवाह-विच्छेद कानून में महिला अधिकारों का बदलता स्वरूप वास्तविक, बहुआयामी और अभी अधूरा है। शायरा बानो ने तात्कालिक तीन तलाक की एकतरफा विधिक शक्ति समाप्त की; वर्ष २०१९ के अधिनियम ने शून्यता को दंड और कुछ तत्काल संरक्षणों से जोड़ा; खुला संबंधी नवीन उच्च न्यायालयीय निर्णयों ने पत्नी की निकास-स्वायत्तता को प्रमुखता दी; और मोहम्मद अब्दुल समद सहित नवीन भरण-पोषण न्यायशास्त्र ने विशेष तथा धर्म-निरपेक्ष उपचारों के सह-अस्तित्व को स्वीकार किया। इन विकासों से महिला की छवि निष्क्रिय संरक्षण-प्राप्तकर्ता से सक्रिय अधिकारधारी की ओर बढ़ी है।

किन्तु विधिक प्रगति का अंतिम परीक्षण धारा या निर्णय की भाषा में नहीं, परिणाम में है। महिला को कितनी शीघ्र वैवाहिक स्थिति का विश्वसनीय प्रमाण मिलता है; क्या मेहर, उचित प्रावधान और भरण-पोषण वास्तव में प्राप्त होते हैं; क्या वह सुरक्षित निवास और बच्चों की देखभाल बनाए रख पाती है; और क्या प्रक्रिया उसकी धार्मिक पहचान तथा संवैधानिक नागरिकता दोनों का सम्मान करती है यही निर्णायक प्रश्न हैं। वर्तमान व्यवस्था में अनेक अधिकार हैं, पर उनका मंचीय विखंडन, अस्पष्ट समायोजन और कमजोर प्रवर्तन न्याय को विलंबित करते हैं।

भविष्य की दिशा “केवल अपराधीकरण” और “पूर्ण अनियमन” के बीच नहीं होनी चाहिए। अधिक उपयुक्त मॉडल है विधिसम्मत विविध विवाह-विच्छेद रूपों के साथ समान न्यूनतम प्रक्रिया; महिला-प्रेरित निकास की स्पष्ट मान्यता; पंजीकृत वैवाहिक स्थिति; एकीकृत अंतरिम राहत; वित्तीय पारदर्शिता; इलेक्ट्रॉनिक प्रमाण के व्यवहारिक मानक; और महिला की स्वतंत्र आवाज़ को केंद्र में रखने वाली संस्थागत संस्कृति। ऐसा ढाँचा धार्मिक बहुलता को मिटाए बिना समानता, गरिमा और न्याय तक प्रभावी पहुँच को मजबूत कर सकता है।

सन्दर्भ

1. मुस्लिम स्वीय विधि (शरीयत) अनुप्रयोग अधिनियम, १९३७, धारा २। यह धारा विवाह-विच्छेद के अंतर्गत तलाक, इला, जिहार, लिआन, खुला और मुबारात सहित अनेक रूपों को मुस्लिम स्वीय विधि के अधीन रखती है।
2. कथरीना वोमेल्सडॉर्फ, “समानता का समीपस्थापन? भारत में धर्मनिरपेक्षता और वैयक्तिक विधि के मानक क्षेत्र में मुस्लिम महिला अधिकार”, तान्या हर्कलोटज़ एवं सिद्धार्थ पीटर डी सूज़ा (संपादक), समानता के लिए विद्रोह : भारत में विधि और लैंगिकता के समकालीन विकास, कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय प्रकाशन, २०२१, पृ. ७४-८८।
3. जस्टिन जोन्स, “अपने धर्म पर आचरण : भारत में मुस्लिम महिला आंदोलनों द्वारा इस्लामी व्यवहार का पुनर्गठन”, आधुनिक एशियाई अध्ययन, खंड ५५, अंक १, २०२१, पृ. ४०-७४।
4. मुस्लिम विवाह-विघटन अधिनियम, १९३९, धारा २।
5. शायरा बानो बनाम भारत संघ, (२०१७) ९ एस.सी.सी. १।
6. सप्तर्षि मंडल, “शाह बानो की छाया से बाहर : मुस्लिम महिला अधिकार और उच्चतम न्यायालय का तीन तलाक निर्णय”, भारतीय विधि समीक्षा, खंड २, अंक १, २०१८, पृ. ८९-१०७।
7. जेफ्री ए. रेडिंग, “एक धर्मनिरपेक्ष विफलता : शायरा बानो निर्णय में संप्रदायवाद और सामुदायिकता”, एशियाई विधि एवं समाज पत्रिका, खंड ८, अंक १, २०२१, पृ. ५६-७१।
8. उम्मुल फ़ैज़ा, “शाह बानो से शायरा बानो तक : मुस्लिम स्वीय विधि, महिला अधिकार और अल्पसंख्यक अधिकार की राजनीति पर बदलते नारीवादी दृष्टिकोण”, मुस्लिम अल्पसंख्यक मामलों की पत्रिका, खंड ४१, अंक १, २०२१, पृ. १२२-१४०।
9. मुस्लिम महिला (विवाह पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, २०१९, धाराएँ २ से ७।
10. सहैरा ज़ेड. सिद्दीकी, “भारत में तीन तलाक और इस्लामी विधि का राजनीतिक संदर्भ”, इस्लामी विधि पत्रिका, खंड २, २०२१।
11. श्रद्धा चौधरी, “वस्तु-विहीन अपराधीकरण : मुस्लिम महिला (विवाह पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, २०१९ पर आलोचनात्मक विचार”, सामाजिक-विधिक समीक्षा, खंड १७, अंक २, २०२१, पृ. १०९ से आगे।

12. नाज़िमा परवीन, "तलाक का अपराधीकरण और मुस्लिम महिलाएँ : भारत के तीन तलाक कानून, २०१९ की वास्तविकता-जाँच", दक्षिण एशिया बहुविषयी अकादमिक पत्रिका, अंक ३२, २०२४।
13. एक्स बनाम वाई, २०२१ एस.सी.सी. ऑनलाइन केरल २०५४।
14. एक्स बनाम वाई, ए.आई.आर. २०२३ केरल ३३। पुनर्विचार में भी पत्नी के खुला-अधिकार की स्वतंत्र प्रकृति तथा पति की स्वीकृति को अनिवार्य न मानने वाली मूल व्याख्या कायम रखी गई।
15. साग्रिक दत्ता, "तलाक, नातेदारी और 'विचलित' पत्नियाँ : भारत में इस्लामी नारीवाद तथा तलाक और भरण-पोषण का दैनिक जीवन", नृजातीयताएँ, खंड २१, अंक ३, २०२१, पृ. ४५४-४७६।
16. साग्रिक दत्ता, "प्रतिस्पर्धी सहयोगी : मुंबई की शरीयत अदालतों में विधिक बहुलवाद और लैंगिक कर्तृत्व", विधि एवं सामाजिक अन्वेषण, खंड ४७, अंक २, २०२२, पृ. ५१४-५३४।
17. मोहम्मद आरिफ अली बनाम अफसरुन्निसा, परिवार न्यायालय अपील संख्या ७५/२०२४, तेलंगाना उच्च न्यायालय, निर्णय दिनांक २४ जून २०२५।
18. मुस्लिम स्त्री (विवाह-विच्छेद पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, १९८६, धाराएँ ३ से ५।
19. भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, २०२३, धारा १४४; संहिता १ जुलाई २०२४ से प्रभावी हुई।
20. मोहम्मद अब्दुल समद बनाम तेलंगाना राज्य, २०२४ आई.एन.एस.सी. ५०६।
21. राजनेश बनाम नेहा, (२०२१) २ एस.सी.सी. ३२४। निर्णय ४ नवम्बर २०२० को दिया गया।
22. शाहजहाँ बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, २०२५ आई.एन.एस.सी. ५२८।
23. कन्नडन अनवर सलीह बनाम सफीखत, २०२५:केरल:७८५५४।
24. महिलाओं का घरेलू हिंसा से संरक्षण अधिनियम, २००५, विशेषतः धाराएँ १७, १८, १९ और २०।
25. भारत का संविधान, अनुच्छेद १४, १५, २१ और २५।
26. रत्ना कपूर, "विधि में लैंगिकता और 'आस्था' : समानता, धर्मनिरपेक्षता और हिन्दू राष्ट्र का उदय", विधि और धर्म पत्रिका, खंड ३५, २०२०, पृ. ४०७-४३१।
27. जस्टिन जोन्स, "इस्लामी आधुनिकतावाद के रूप में मुस्लिम नारीवाद : कुरआन और संविधान के बीच भारत में महिला सक्रियता", आधुनिक एशियाई अध्ययन, खंड ५८, अंक २, २०२४, पृ. ४२१-४४७।
28. कैथरीन लेमन्स, विवाह-विच्छेद की परंपराएँ : इस्लामी विवाह-विधि और भारतीय धर्मनिरपेक्षता का निर्माण, कॉर्नेल विश्वविद्यालय प्रकाशन, २०१९।
29. कैथरीन लेमन्स, "शरीयत अदालतें और भारत में मुस्लिम स्त्रीय विधि : परस्पर काटती विधिक व्यवस्थाएँ", विधि एवं समाज समीक्षा, खंड ५२, अंक ३, २०१८, पृ. ६०३-६२९।
30. परिवार न्यायालय अधिनियम, १९८४, धाराएँ ७ और ९।
31. मुस्लिम महिला (विवाह पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, २०१९, धारा २(ग) तथा धाराएँ ३ और ४।
32. भारतीय साक्ष्य अधिनियम, २०२३, धाराएँ ६१ से ६३; इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख की विधिक प्रभावशीलता और ग्राह्यता के लिए निर्धारित शर्तें।
33. जस्टिन जोन्स, "क्या मुस्लिम परिवार-विधि अधिनियम की ओर? भारत में मुस्लिम महिला अधिकार और वैयक्तिक विधियों के संहिताकरण पर बहस", समकालीन दक्षिण एशिया, खंड २८, अंक १, २०२०, पृ. १-१४।
34. मुस्लिम महिला (विवाह पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, २०१९, धारा ७। अपराध को संज्ञेय बनाने, समझौते और जमानत के संबंध में महिला-केंद्रित शर्तें इसी धारा में दी गई हैं।
35. फ्लाविया एग्रेस, "तीन तलाक : सामुदायिकीकृत राजनीति में लैंगिक चिंताएँ और अल्पसंख्यक सुरक्षा—क्या शर्तयुक्त निकाहनामा समाधान हो सकता है?", एन.यू.जे.एस. विधि समीक्षा, खंड १०, अंक ३, २०१७, पृ. ४२७-४५०।
36. विधि आयोग, परिवार-विधि सुधार पर परामर्श-पत्र, भारत सरकार, २०१८।

Disclaimer/Publisher's Note: The views, findings, conclusions, and opinions expressed in articles published in this journal are exclusively those of the individual author(s) and contributor(s). The publisher and/or editorial team neither endorse nor necessarily share these viewpoints. The publisher and/or editors assume no responsibility or liability for any damage, harm, loss, or injury, whether personal or otherwise, that might occur from the use, interpretation, or reliance upon the information, methods, instructions, or products discussed in the journal's content.